अप्रशिक्षित शिक्षक, अनुत्तीर्ण बच्चे और असफल राज्य

♦ सचिन कुमार जैन

जीवन अगर समानता और सम्मान चाहिए है तो शिक्षा उसके लिये बुनियादी शर्त है किन्तु मध्यप्रदेश के बच्चों के लिए अब भी शिक्षा एक चुनौती ही बनी हुई है। राज्य के विदिशा जिले के नटेरन विकासखण्ड के 282 स्कूलों में से 102 स्कूल ऐसे हैं जहां वर्ष 2006-07 के दौरान दी गई शिक्षा का प्रभाव जीवन में नहीं उतर पाया। इन स्कूलों का एक भी बच्चा प्राथमिक स्तर की परीक्षा उत्तीर्ण नहीं कर पाया। इसी सत्र में राज्य के स्तर पर सौ में से 41 बच्चे उत्तीर्ण होने का प्रमाण पत्र हासिल नहीं कर सके और यह ऐसा वर्ष है जब प्रतिभावान छात्रों की सूची में सरकारी स्कूल का एक भी छात्र शामिल नहीं है। अगर स्कूली शिक्षा का राज्य और समाज में कोई महत्व है तो शिक्षा व्यवस्था की स्थिति, खासतौर पर गुणवत्तपूर्ण शिक्षा की स्थिति, चिंताजनक नजर आ रही है। राज्य के 46 प्रतिशत शिक्षक बिना प्रशिक्षण अपना काम कर रहे हैं। संविदा शिक्षकों और शिक्षाकर्मियों को वास्तव में शिक्षक का दर्जा देने का निर्णय वास्तव में व्यवस्था में समानता के अधिकार के लिये देर से लिया गया निर्णय है। अब वास्तव में सवा लाख अस्थाई-अधूरे शिक्षकों को सम्मान और समानता का अधिकार मिलेगा। पर सवाल यह है कि क्या वास्तव में इससे शिक्षण की गुणवत्ता में सुधार आयेगा ?

ऐसी स्थिति की कल्पना करके तन और मन में सिहरन दौड़ जाती है हम एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था को प्रोत्साहित कर रहे हैं जहां शिक्षा के व्यापार को बढ़ावा देने के लिये सरकार धीरे-धीरे अपने ही घर को खोखला कर रही है। भेदभाव से भरपूर शिक्षा नीतियों के आधार पर प्रदान की गई शिक्षा निःसंदेह बच्चों के मन को जातिगत और साम्प्रदायिक भेदभाव से मुक्त करा पायेगी, इस बात में संदेह है। बार-बार यह सवाल उठने लगा है कि जब शिक्षक ही अप्रशिक्षित होगा तो वह बच्चों को किस तरह की शिक्षा प्रदान करेगा। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समाज और राजनीति को अंततः यह तो स्वीकार करना ही पड़ा है कि शिक्षा का अधिकार जीवन के मौलिक अधिकार से जुड़ा हुआ मसला है। सन् 2000 में डकार में हुये विश्व शिक्षा मंच के सम्मेलन मे दुनिया के तमाम देशों, जिनमें भारत भी शामिल था, ने एक सुर में यह दावा किया था कि वर्ष 2015 तक सभी को शिक्षा उपलब्ध करा दी जायेगी परन्तुं इस दावे को पूरा करने के लिये जिन चुनौतियों का सामना किया जाना है उनके लिये कम से कम सरकार तो तैयार नहीं दिखती है। शिक्षा समाज के ताकतवर और कमजोर वर्गो के समीकरण को पूरी तरह बदल सकती है इसलिये मुफ्त, अनिवार्य और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की सोच का विरोध होता रहा हे। सन 1911 में इम्पीरियल असेम्बली में गोपाल कृष्ण गोखले ने मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा का विधेयक पेश किया था लेकिन सामंतवादी और भेद की राजनीति करने वाले वर्ग के विरोध के कारण यह पारित न हो सका। इसके बाद सन 1937 में महात्मा गांधी ने शिक्षा को राज्य की पहली प्राथमिकता बताते हुये शिक्षा मंत्रियों से शिक्षा को उत्पादक बनाने को कहा पर उन्होंने संसाधनों की कमी का तर्क देकर अपनी भूमिका निभा दी। आज भी स्थिति में बहुत बदलाव नहीं आया है। शिक्षा दी जाने लगी है परन्तु शिक्षक नहीं आता है, स्कूल हैं किन्तु किताबें और इमारते नहीं हैं। फिर यदि कुछ होता है तो वह है बहुआयामी भेदभाव। मध्यप्रदेश के शिक्षा प्रयासों की हाल ही में विश्व बैंक ने सराहना की है क्योंकि भूमण्डलीकरण और बाजारवाद की प्रक्रिया के बढ़ाने वाली यह संस्था मानती है कि शिक्षा व्यवस्था में स्थाई शिक्षकों से शिक्षा की गाड़ी को धकाया जा सकता है। जिस तरह समानता के लिये शिक्षाकर्मियों को अध्यापक बनाया गया है उसी तरह उन्हें पूरा सम्मान देने के लिये जरूरी है कि शिक्षकों को गैर-शिक्षकीय कार्मो से मुक्ति दी जाये।

मध्यप्रदेश में 117502 पैरा-शिक्षक (संविदा शिक्षक, शिक्षाकर्मी और अस्थाई शिक्षक) रहे हैं। इस साल इस संख्या में 50 हजार की संख्या और जुड़ जाने वाली है। सबके लिये शिक्षा के नाम पर सरकार ने पैरा शिक्षक रखकर काम कराने का सिद्धान्त स्वीकार किया है। महत्वपूर्ण बात यह है कि ये शिक्षक विषयों और शिक्षण के कौशल के सम्बन्ध में औसत क्षमतायें भी नहीं रखते है।। जैसे कि यह बहस आमतौर पर चलती रही है कि कम से कम स्कूली शिक्षा तो अनिवार्य होना ही चाहिये किन्तु सरकार ने प्राथमिक स्तर की शिक्षा और इससे थोड़ा ज्यादा मिडल स्कूल की शिक्षा ''अनिवार्य शिक्षा''

का हिस्सा माना है। अब चूंकि सरकार इससे बंधी हुई है इसलिये उसने कम वेतन पर अस्थाई और अप्रशिक्षित शिक्षक रखकर अपनी जवाबदेहिता निभाने की रणनीति अपनाई है। महत्वपूर्ण यह है कि 1.17 लाख पैरा शिक्षकों में से 96 हजार शिक्षक माध्यमिक शिक्षा व्यवस्था में ही काम कर रहे हैं। भारत के एक तिहाई और सबसे ज्यादा पैरा शिक्षक मध्यप्रदेश में ही हैं। मकसद यह है कि ''सबके लिये शिक्षा'' की औपचारिकता पूरी की जा सके। उच्चस्तरीय स्कूली शिक्षा व्यवस्था में आज भी पूर्णकालिक, स्थाई और प्रशिक्षित शिक्षक ही अध्यापन का कार्य कर रहे हैं। यह एक स्वाभाविक सा तर्क है कि सरकारी स्कूल में माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा प्राप्त करने वाले, ग्रामीण, आदिवासी दलित और आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के बच्चों को शिक्षा तो मिलेगी किन्तु न तो यह गुणवत्तापूर्ण होगी न ही उत्पादक। मध्यप्रदेश शिक्षा अभियान द्वारा भोपाल में की गई बाल शिक्षा सुनवाई के दौरान यह तथ्य स्थापित हुआ था कि प्राथमिक स्तर पर सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले ग्रामीण बच्चे के केवल अपना नाम ही ठीक ढंग से लिख पा रहे हैं यानी वे केवल साक्षर हुये हैं। यह स्पष्ट रूप से संविधान द्वारा दिये गये समानता और शिक्षा के अधिकार का व्यापक उल्लंघन है। हाल ही में आदिवासी इलाकों की शिक्षा की स्थिति का विश्लेषण करते हुये मध्यप्रदेश सरकार ने अतिथि शिक्षकों से अध्यापन का कार्य कराने की नीति की घोषण की। ये भी अस्थाई शिक्षक होंगे, अनुभव और कौशल की कोई जरूरत नहीं है और जितने सत्र ये पढ़ायेंगे उतना शुल्क उन्हें प्रदान किया जायेगा। स्थिति यह है कि मध्यप्रदेश में वैसे ही 49200 पैरा शिक्षक स्व्यं की शिक्षा हायरसेकेण्डरी या उससे कम है। और 88 हजार शिक्षकों को कोई प्रशिक्षण नहीं मिला है। ये वे शिक्षक हैं जो ग्रामीण इलाकों में खासतौर पर वंचित वर्गो के बच्चों के अध्यापन का काम करते हैं। ये वे बच्चे हैं जिन्हें शिक्षा की जरूरत केवल पढ–लिख सकने के लिये नहीं बल्कि वर्ग और वर्ण भेद से मुक्ति की प्रक्रिया का मूल चरण है। ऐसे में यह स्पष्ट नजर आता है कि सरकार शिक्षा और सामाजिक बदलाव के परस्पर सम्बन्धों को या तो समझ नहीं पा रही है या फिर स्वीकार नहीं करना चाहती है। मध्यप्रदेश शिक्षा अभियान का अनुभव दस्तावेज कहता है कि अध्यापन कला में पारंगत शिक्षक भी प्राथमिक शालाओं के बच्चों की पढ़ाई को उच्च शिक्षा की पढ़ाई से कठिन मानते हैं फिर भी राज्य में प्राथमिक स्तर की शिक्षा की जिम्मेवारी अकुशल हाथों में सौंपी गई है। सरकार न` इस समस्या के निराकरण की एक औपचारिक रणनीति बनाई है जिसके तहत राजा भोज मुक्त विश्वविद्यालय के दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (डिस्टेंस ऐजुकेशन प्रोग्राम) के तहत एक लाख से अधिक शिक्षकों को शाला में जिम्मेदारी निभाते हुये डीएस (डिप्लोमा इन एजुकेशन) कराया जा रहा है। यहां भी मुद्दा यह है कि बिना व्यावहारिक प्रशिक्षण के शिक्षण का कौशल कैसे हासिल होगा? वर्तमान व्यवस्था में काम करते हुये शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम कर पाने की स्थिति में नहीं है। राज्य में 30233 (25.06 फीसदी) विद्यालय ऐसे हैं जहां एक ही शिक्षक शिक्षण, प्रशासन और मध्यान्ह भोजन योजना के दायित्व का निर्वहन कर रहे हैं। किसी और की न सही राज्य सरकार को भारत के सर्वोच्च न्यायालय की चिंता से वाकिफ कराना जरूरी है। आंध्रकेसरी शैक्षणिक समाज विरूद्ध निदेशक, 'शाला शिक्षक के संदर्भ में सर्वोच्य न्यायाल्य ने स्पष्ट उल्लेख किया था कि असक्षम और कौशलहीन शिक्षक शिक्षा तंत्र के लिये खतरा हैं। ऐसे मे सरकार और विश्वविद्यालय को ये ध्यान रखना होगा कि शिक्षकों के अपर्याप्त प्रशिक्षण के कारण बच्चों की शिक्षा पर बुरा प्रभाव न पड़े। इसी तरह मुथ्थुकुमार विरूद तमिलनाडु राज्य के मामले मे सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि अप्रशिक्षित शिक्षकों द्वरा बच्चों को पढाया जाना राष्ट्र के लिये बहुत हानिकारक और राष्ट के विकास की गति मे बाधक है। पर सरकार शिक्षा के बाजारीकरण मे इतनी मशगुल है कि उसे न्यायालय की आवाज भी सुनाई नही दे रही है। यह वक्त की जरूरत है कि शिक्षा का सवाल एंव जनआंदोलन बने जो निजी शिक्षा व्यवस्था को बेहतर मान रहे उन्हे यहा भी समझ लेना होगा कि वे सरकार को उसकी संवैधानिक जिम्मेदारियो के कार्य भार से मुक्त कर रहे है और यह बहुत खतरनाक है कि समाज मे राज्य का ही अस्तित्व नही रहेगा।